ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.3262169

INTERNATIONAL JOURNAL OF RESEARCH – GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository

Social

विज्ञान के मिथ्याकरण: कार्ल पॉपर के दृष्टिकोण से समाज-विज्ञान शोध

रंजिनी घोष [1]
[1] लेक्चरर, कटोआ गॉव्ट. पी.टी.टी.आई. बर्धमान, पश्चिम बंगाल

सारांश: सर कार्ल पॉपर के अनुसार वैज्ञानिक सिद्धांतों में पुनर्विवेचना की आवश्यकता है, जिससे वे सत्य के निकट पहुंचे। जहाँ छद्मविज्ञान अपने आप को स्वयं-सिद्ध मानता है, वहीं विज्ञान स्वयं का कई कसौटियों में परीक्षण करता है। सत्य तक पहुँचने हेतु तर्क एवं गणित की सहायता आवश्यक होती है। अवैज्ञानिक विधि केवल प्रत्यक्षीकरण पर आधारित होती है। सर कार्ल पॉपर ने पहली बार थॉमस कुह्न, सिगमंड फ्रोएड, कार्ल मार्क्स जैसे तमाम विद्वानों के सिद्धांतो पर प्रश्न उठाया था। इस आलेख में समाज विज्ञान के क्षेत्र में किए गए शोधकार्य पर सर पॉपर-के मिथ्याकरण सिद्धांत के महत्व को सूचित किया गया है।

की वर्ड एवं परिभाषा:
मिथ्याकरण: विभिन्न आयामों से किसी सिद्धांत को मिथ्या प्रमाण करने की चेष्टा करना, जिससे वह सत्य तक पहुंच सके।
समाज:विज्ञान- यह शिक्षण अधिगम-तथा शोध का केंद्रीय बिंदु)core curriculum) है, जिसमें इतिहास, समाज शास्त्र, शिक्षा शास्त्र आदि विषयों का समावेश है।

Cite This Article: रंजिनी घोष. (2019). "विज्ञान के मिथ्याकरण: कार्ल पॉपर के दृष्टिकोण से समाज-विज्ञान शोध." *International Journal of Research - Granthaalayah,* 7(6), 67-71. https://doi.org/10.5281/zenodo.3262169.

प्रस्तावना:

ऑस्ट्रियायी ब्रिटिश नागरिक सर कार्ल पॉपर को बीसवी सदी के महान दर्शनिकों में गिना जाता है। उनका जन्मसन् 28 जुलाई 1902 को वियना (उस समय हंगरी) के एक उच्च-मध्यम वर्गीय परिवार में हुआ था। सर कार्ल पॉपर को उनके वैज्ञानिक विधि के पारंपरिक विवेचनात्मक विचारो अस्वीकृति के लिए जाना है। वे तार्किक प्रत्यक्ष-वाद और थॉमस कुन्ह के विरोधी थे।[3] उनका कहना था कि कोई भी ज्ञान उसी स्थिति में विज्ञान या प्रभावित ज्ञान होता है जब तक उनके सिद्धांतों को चुनौती देने या गलत साबित करने की संभावना बनी रहती है। "कब किस सिद्धांत को माना जाता है ?" इस प्रश्न का उत्तर खोजते हुए ही कार्ल पॉपर का मिथ्याकरण के विज्ञान का सिद्धांत (science of falsification) बनाथा। उनका कहना था कि किसी सिद्धांत की सत्यता जाँचने अथवा यह जानने के लिए कि वह सिद्धांत कितना ग्रहण करने योग्य है, यह समझने से ज्यादा महत्वपूर्ण ज्ञान और छद्मज्ञान के बीच के अंतर को समझना है।[1]

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.3262169

वैज्ञानिक एवं अवैज्ञानिक संस्थापनाओं के बीच का अंतर:

वह दर्शन में अपने 'आलोचनात्मक तर्क वाद' तथा विज्ञान में 'अवधारणात्मक निगमनात्मक' विधि के लिए जाने जाते हैं। उनका सबसे यादगार काम यह था कि उन्होंने वैज्ञानिक तथा अवैज्ञानिक संस्थापनाओं के बीच एक लक्ष्मण रेखा खींची। इसे सीमांकन (line of demarcation) कहा जाता है।[2] उनका यह काम कम चुनौतीपूर्ण नहीं था, लेकिन स्वभाव से निरा तार्किक होने के चलते उन्होंने दार्शनिक चिंतन के इतिहास की कई मूर्तियों को ध्वस्त करने का अदम्य साहस दिखाया।[2]

छद्म-विज्ञान की अवधारणा:

लगभग सभी विद्वानों के मतानुसार विज्ञान अपने अनुभव/ प्रयोगमाध्यम (Empirical Method) एवं अनुमान/ आगमनात्मक पद्धति (Induction Method) द्वारा ज्ञान तक पहुंचता है। कभी कुछ वैज्ञानिक प्रयोग विज्ञान के हर सिद्धांतों को मान कर भी सत्य तक नहीं पहुँचते लेकिन कभी-कभी कुछ ज्ञान जो अवैज्ञानिक होते हुए भी विज्ञान के नियमों को मानते हुए सत्य तक पहुँच जाते है ; जैसे मार्क्स का सिद्धांत या फ्रायड का सिद्धांत वैज्ञानिक नियमों को मान कर नहीं बना है । मार्क्सवाद, साइको-अनालिस एवं इंडिविजुअल साइकोलॉजी के सिद्धांत गणित के नियमों से प्रमाणित न हो कर भी इन की सत्यता को स्वीकार किया गया है। प्रत्यक्ष प्रयोगों के माध्यम से सिद्धांतों को सत्यापित किया जाता है। प्रत्यक्ष किए हुए वस्तुओं को छद्म विज्ञान द्वारा विभिन्न प्रकार से परिभाषित किया जा सकता है किंतु विज्ञान का परिभाषिकरण सार्वभौमिक होता है।[2]

कार्ल पॉपर ने 1919-20 मैं अपनी किताब में अपना मत व्यक्त करते समय निष्कर्षों का उल्लेख किया था।[4] निम्नलिखित रूप में निष्कर्ष का संक्षेप:

- पुष्टिकरण के माध्यम से हम सिद्धांत का सत्यापन कर सकते हैं।
- जब भी कहीं संदेह होता है तो उसकी जांच की जाती है।
- जिसे खंडन नहीं किया जा सकता है वह कल्पना ही है विज्ञान नहीं।
- एक सच्चा सिद्धांत अपनी सच्चाई की बार बार परख करता है।
- सिद्धांत वही है जो अपनी त्रुटियों को जांचने के बाद त्याग देता है।
- सत्यापन करने का अर्थ यही है कि उसकोझूठा साबित नहीं किया जा सकता।
- सिद्धांत के जो भी अनुगामी होते हैं वह झूठ को स्वीकार नहीं करता और इसलिए वह चलता जाता है।

मिथ्याकरण से सत्य तक पहुँचना:

कार्ल पॉपर के अध्ययन में उन सिद्धांतों के लिए मिथ्याकरण (Falsifiability) तथा पुष्टिकरण (Corroboration) शब्दों का प्रयोग किया गया है, जो सिर्फ प्रत्यक्ष होने के आधार पर अनुमोदित होता है। यह जो गलत साबित हो जाने का परीक्षण/अवलोकन है वहीं विज्ञान तथा विज्ञान के बीच की बारीक सूत है। वास्तव में वह सिद्धांत वैज्ञानिक होने के कारण झूठा या गलत साबित हो सकता है। अर्थात जो सिद्धांत मिथ्याकरण (Falsifiable) के योग्य है वही वैज्ञानिक है और जिस सिद्धांत को चालाकी से अनुमोदित कर दिया जाता है और उसे औचित्य पूर्ण ठहरा दिया जाता है वह छद्म विज्ञान हैं। बार-बार परीक्षण की परीक्षा में सफल होने का अर्थ यही है के उस सिद्धांत में त्रुटि की कमी है और जितनी ही उस सिद्धांत में त्रुटि की कमी होगी वह सिद्धांत सत्य के करीब पहुंचता है।[4]

 ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.3262169

कान्ट ने आदर्श वाद को समझाते हुए प्रकृति नहीं बल्कि इसके नियमों को सहज माना है, जिसे जांचने के लिए व्यक्ति के बौद्धिक अभिक्षमता को महत्व दिया हैं। प्रकृति के सहज नियमों को जानने के लिए रूढ़िवादी प्रथा चमत्कार और असंगत तर्क देती है जो व्यक्ति के कल्पना तथा संरचना के अभिक्षमता पर आधारित होते हैं। ऐसे तर्क को काटना और मिथ्या प्रमाणित करना आसान तो है किन्तु उसे स्वीकारना मुश्किल है। जब तक किसी सिद्धांत को मिथ्या प्रमाणित करने की सारे तर्क असफल न हो, तब तक उसे स्वीकारना सही नहीं है।[1]

पॉपर को ज्ञान के पारंपरिक विरोध के लिए भी जाना जाता है, जिसे समीक्षात्मक बुद्धिवाद की तर्क दिया जाता है। राजनैतिक बहस में उन्होंने उदार लोकतंत्र और सामाजिक आलोचना के सिद्धांतों की ज़ोरदार वकालत की। उनके राजनैतिक दर्शन सभी प्रमुख लोकतान्त्रिक राजनैतिक विचारधाराओं जैसे सामाजिक लोकतंत्र पारम्परिक उदारवाद रूढ़िवाद और समाजवाद के विचारों को गले लगाते और सामंजस्य स्थपित करने का प्रयास करते हैं।[5] कार्ल पोपर ने सैद्धांतिक मतों का विरोध करते हुए यह कहते है कि जिन विषयों को गणित से प्रमाणित नहीं किए जा सकते हैं वह केवल वस्तुनिष्ठ प्रत्यक्ष पर आधारित होते है, इन्हे विज्ञान नहीं कहा जा सकता हैं। स्वत:सिद्ध सिद्धांतों में सदा ही मिथ्या होने की संभावना बनी होती है, जो इसे और भी सत्य के करीब पहुँचने के लिए प्रमाण खोंजने में उत्साह देती है, इसलिए इसे वास्तव के समकक्ष कहा जाता है। तथाकथित परिभाषाको पुष्ट करने के लिए अनौपचारिक प्राक्कलपना एवं संशयपूर्ण तथ्यों का संग्रहण किया जाता है। जो विज्ञान के सिद्धांत नहीं है, बल्कि सत्य तक पहुँचने के लिए एक चुनौती है।[5]

ज्ञान - मिथ्याकरण का सिद्धांत है:

पॉपर का कहना है की कोई भी ज्ञान तभी विज्ञानं या प्रभावित ज्ञान होता है जब उनके नियमों सिद्धांतों को खुद के अपने बनाये हुए नियमों को चुनौती देने की सम्भावना या गलत साबित करने की बनी रहती है।[1] ज्ञान की वह श्रेणी जिसमें की उस ज्ञान से सम्बंधित नियमों सिद्धांतों को चुनौती बनी रहती है, वही ज्ञान कहलाता है और जो ज्ञान अपने नियमों को चुनौती देने की इजाज़त नहीं देता है वो विज्ञानं की श्रेणी में नहीं आता है, जैसे धर्म। धर्म में हमें चुनौती देने की इजाज़त नहीं होती है तो इसे हम विज्ञानं नहीं मान सकते है। क्योंकि इसमें हमें चुनौती देने की सम्भावना नहीं होती इसलिए उसे मिथ्या करने की सम्भावना भी नहीं होती और यही मिथ्याकरण का सिद्धांत है।[4]

वही ज्ञान सत्य होता है जो मिथ्याकरण की प्रक्रिया से गुज़रता है यानि अपने ही द्वारा स्थापित किये गये नियमों को चुनौती देता है, सार्थकता की जाँच करता है और उसको नकारने की चेष्टा करता है। यहाँ ध्यान देने योग्य बात ये है कि वह उसे गलत साबित नहीं कर रहा बल्कि गलत साबित करने की चेष्टा कर रहा है।[4]

मिथ्याकरण विज्ञान को चुनौती देने और उसको गलत साबित करने के लिए तमाम नियम लगाने के बाद भी अगर वो सही साबित हो रहा है तो वह विज्ञान है। हम ज्ञान प्राप्त करने के लिए जिस प्रक्रिया को अपनाते हैं और प्रक्रिया के दौरान हम किसी चीज की जाँच करते हुए अगर वो मिथ्या साबित हो रहा है तो इस का अर्थ है कि हम सत्य के निकट पहुँच रहे हैं। पॉपर ने कोपेन हेगन के क्वांटम मैकेनिक्स के बारे में भी कहा कि पदार्थ की जो अंतिम अवस्था वो भी सत्य के अवलोकन के अधर पर बदल जायगी।[5]

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.3262169

मिथ्याकरण आगमन की समस्या:

दर्शन के लिए उनका योगदान आगमन की समस्या का हल है। वह बताते हैं कि यदि सूर्य उदय होता है तो और उसे साबित करने का तरीका नहीं है तो यह सिद्धांत बनाना संभव है कि प्रत्येक दिन सूर्य उदय होता है और यदि किसी निश्चित दिन से सूर्य उदय नहीं होता तो यह सिद्धांत गलत होगा और फिर इसे किसी भिन्न सिद्धांत से परिवर्तित किया जायगा। तब तक इस अवधारणा को खंडित करने की जरूरत नहीं होगी जब तक यह सिद्धांत सत्य है। पॉपर के अनुसार और जटिल अवधारणा बनाना कि किसी निश्चित दिन को सूर्य उदय होगा उचित नहीं है लेकिन हमें अतिरिक्त शर्तों के साथ समरूप कथनों को कहना रोकना होगा। पॉपर ने पाया कि यदि ज्ञात तथ्य जिसे कोई तार्किक रूप से वरीयता देता है उसे सबसे कम या सबसे आसानी से मिथ्याकरण किया जा सकता है।[5]

पॉपर की विज्ञान से एक आवश्यक जिरह:

कार्ल पॉपर एक ऐसे बुद्धिजीवी दार्शनिक हैं, जिनका पूरा लेखन अपने प्रश्नवाची तेवरों के लिए जाना जाता है। उनकी नज़र से देख लेने पर यह संसार हमारे लिए पहले जैसा ही नहीं रह जाता है। उन्होंने ज्ञानात्मक विमर्श को अपने ढंग से विश्लेषित किया। वैज्ञानिकता की पहचान और परख को नए कोण से देखा। देखने का उनका अंदाज़ इतना निराला था कि उन्होंने अपने ज़माने के कई ऐसे बेहद प्रतिष्ठित सिद्धांतों की बुनियादें हिला दी थीं जो वैज्ञानिक होने का दम भरते थे। पॉपर की निग़ाह ने पहली बार पकड़ा कि कुछ चीजें इस कायनात में कुदरती ढंग से घटती हैं, लेकिन वे मानस में बसी बौद्धिक रूढ़ियों या स्वयं-स्वीकृतियों के कारण एक औसत विचार होने के बावजूद किसी चर्चित दर्शन या सिद्धांत के अनुरूप घटती दिखाई देती हैं। दार्शनिक चिंतन के क्षेत्र में कार्ल पॉपर का यह एक जबरदस्त हस्तक्षेप था।[4]

वे दर्शन में अपने 'आलोचनात्मक तर्कवाद' तथा विज्ञान में 'अवधारणात्मक-निगमनात्मक' विधि के लिए जाने जाते हैं। उनका सबसे चर्चितकाम वैज्ञानिक तथा छद्म-वैज्ञानिक स्थापनाओं के बीच एक लक्ष्मण-रेखा खींचना था, जिसे Line of demarcation कहा जाता है।[2]

वर्तमान समय में विज्ञान के मिथ्याकरण तथा कार्ल पॉपर का महत्व:

हाल ही में समाज-विज्ञान के क्षेत्र में जिस प्रकार का शोध किया जा रहा है, उसमें सत्य को जाँचने की जगह, शोधकर्ता के मत को अधिक महत्व दिया जा रहा है। इस पक्षपात के कारण सत्य तक नहीं पहुंचा जा रहा है। इसके परिणाम स्वरूप समाज-विज्ञान के अधिकतर शोधकार्य निम्म गुणवत्ता के है। इन शोधकार्यों के प्रतिदर्श से संबन्धित तथ्यों की जांच, शोध-साहित्य की पुनरालोचना एवं आँकड़ों के विश्लेषण प्रक्रिया की जांच आवश्यक होनी चाहिए, जिससे कि शोधकार्यों से प्राप्त किए गए परिणाम तथा निष्कर्षो से सत्य तक पहुंचा जा सके। इस जांच प्रक्रिया में व्यक्तिगत आलोचना से अधिक महत्वपूर्ण निष्कर्षों की सत्यता की खोंज होगी। प्लगरिज़्म जैसे प्रक्रिया से शोधकर्ता की नैतिकता के प्रति ध्यान केन्द्रित किया जा रहा है, इस प्रकार के शोधकार्यों से प्राप्त किए गए परिणाम, निष्कर्ष तथा सिद्धांतों का भी पुर्नपरीक्षण अवश्य चाहिए। किसी भी शोध के उद्देश्य तथा निष्कर्ष को कई आयामों से अवलोकन करना चाहिए, जिससे यह ज्ञात किया जा सके कि संगृहीत किए गए प्रतिदर्श उस शोध के लिए यथार्थ है या नहीं। UGC, ICSSR एवं अजीम प्रेमजी जैसी सरकारी व गैर सरकारी संस्थाएं समाज-विज्ञान के क्षेत्र में सर्वेक्षण तथा शोधकार्य के लिए विशेष आर्थिक अनुदान की व्यवस्था कर रही है, इसलिए शोधकार्य को अवश्य ही सत्य तक पहुँचाने के अपने उत्तरदायित्व को पूर्ण करना चाहिए।[6]

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.3262169

संदर्भ सूची

[1] https://plato.stanford.edu/entries/popper
[2] http://www.stephenjaygould.org/ctrl/popper_falsification.html
[3] https://en.wikipedia.org/wiki/Karl_Popper
[4] https://www.iep.utm.edu/pop-sci/
[5] https://whatis.techtarget.com/definition/falsifiability
[6] https://www.jstor.org/stable/4367949?seq=1#page_scan_tab_contents

*Corresponding author.
E-mail address: ghosh.ranjinighosh@ gmail.com